श्री महावीराय नमः जैनं जयति शासनम् श्रीमत् सुदर्शन गुरवे नमः

जैन संस्कार शिविर
पाठ्यक्रम भाग-3

जैन संस्कार शिविर समिति

A step for the Jain youth of tomorrow

संस्करण : 2020

प्रकाशकीय

शासनपति भगवान् महावीर स्वामी ने सम्यग्ज्ञान, सम्यग् दर्शन, सम्यक् चारित्र एवं सम्यक् तप, इन चारों को मोक्ष का द्वार फरमाया है। इनमें चारित्र एवं तप शरीर-साध्य होने से इह भविक हैं अर्थात् केवल धारण-कर्त्ता तक सीमित रहते हैं, अन्य व्यक्ति में या परभव में स्थानान्तरित नहीं हो सकते। सम्यग् दर्शन भी आत्मा का ही निश्चयगुण होने से इसका लेन-देन असम्भव है। केवल सम्यग् ज्ञान ही दूसरे को दिया/लिया/पहुंचाया जा सकता है। स्कूल/कालेजों का ज्ञान छात्र-छात्राओं को आजीविका कमाने के लिए सक्षम बनाने पर केन्द्रित रहता है, पर धर्म-शिक्षा का ज्ञान उन्हें सुसंस्कारी व व्यसन-मुक्त बनाकर इस भव व परभव में कल्याण-साधक बनता है।

आज भारतवर्ष में विभिन्न प्रान्तों में, विभन्न संगठनों द्वारा, विभिन्न शैली में अनेक धर्म-शिक्षण-शिविर लगाए जा रहे हैं। पूज्य गुरुदेव संघ-शास्ता शासन-प्रभावक श्री सुदर्शन लाल जी म. सा. के मुनि-संघ के महामुनिराज महास्थविर श्री प्रकाश चन्द्र जी म. एवं संघ संचालक मनोहर व्याख्यानी श्री नरेश मुनि जी म. तथा इनके संघवर्ती अन्य विद्वान मुनिराजों एवं महासतियों के कृपापूर्ण आशीर्वाद से जैन संस्कार शिविर समिति, दिल्ली द्वारा सन् 2012 से उत्तर भारत के कई प्रान्तों में स्थानीय जैन सभाओं के सहयोग से जैन-संस्कार-शिविर लगाए जा रहे हैं। इन शिविरों में नई पीढ़ी को जैन धर्म, जैन धर्म-स्थान व जैन धर्म गुरुओं से जोड़ने का सम्प्रदाय-निरपेक्ष रूप में भगीरथ प्रयास किया जा रहा है।

इस पुस्तक के निर्माण में पूज्य गुरुदेवों एवं विभन्न लेखकों की रचनाओं का विनम्र सहयोग लिया गया है। हम उन सब के हृदय से आभारी हैं।

इस पुस्तक को प्रत्येक जैन सुक्ष्मता से पढ़े, समझे और उस पर आचरण करे। हमें आशा है कि यह पुस्तक बालकों तथा युवाओं को जैन धर्म के संस्कार देने में सफल रहेगी।

इस ही मंगल मनीषा के साथ...

रवीन्द्र जैन
शिविर-संयोजक

प्रकाशक :
जय जिनशासन प्रकाशन
212, वीर अपार्टमैन्टस्, सैक्टर 13,
रोहिणी, दिल्ली-110 085
Mob: +91-98102 87446
Email : jaijinshaasanprakaashan@gmail.com

मुद्रक :
सिस्टम्स् विज़न, नई दिल्ली
Mob: +91-98102 12565
Email: systemsvision96@gmail.com

श्री मया-मदन-सुदर्शन-प्रकाश-पद्म-नरेश गुरुभ्योः नमः

विषयक्रम

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	सूत्र विभाग	
1.	आलोचना-सूत्र अर्थ सहित	2
2.	कायोत्सर्ग-सूत्र अर्थ सहित	4
3.	चतुर्विंशति-स्तव-सूत्र अर्थ सहित	6
4.	प्रणिपात-सूत्र (शक्र-स्तव-सूत्र) अर्थ सहित	8
	तत्व विभाग	
5.	सामायिक सम्बंधित 32 दोष	10
6.	चार गतियों में भ्रमण के कारण व निवारण	11
7.	श्रावक के 12 व्रत	13
8.	आठ कर्म	15
	काव्य विभाग	
9.	मेरी भावना	17
	सामान्य ज्ञान विभाग व कथा विभाग	
10.	अनावश्यक हिंसा	18
11.	हिन्दू कलैण्डर और जैन पर्व	19
12.	जैन तप-विधि	21
13.	भगवान ऋषभदेव	23
14.	लोकाशाह एवं पांच धर्म सुधारक	25
15.	पाठ्यक्रम सम्बंधित मुख्य प्रश्नोत्तर	28
16.	Glossary	31

आलोचना-सूत्र

जैसा कि हम देखते व जानते हैं कि जब हम चलते, फिरते, उठते हैं, किसी न किसी जीव की हिंसा जाने-अनजाने में हो जाती है। क्योंकि जैन धर्म में हिंसा सबसे बड़ा पाप है और उस पाप का फल मित्था हो यानि हमें उस पाप का फल न भोगना पड़े, इसलिए हम इस पाठ का उच्चारण करते हैं। इस पाठ में छोटे-2 जितनी भी प्रकार के जीवों की हिसां की सम्भावना रहती है उन सबके नाम गिनाए गये हैं।

पाप को पाप समझने से पाप नष्ट या खत्म इस प्रकार से हो जाता है जैसे कभी-2 परीक्षा में किसी प्रश्न का गलत उत्तर लिखने पर अगर हम उस पर X लगा दें तो हमारे Marks नहीं कटते और प्रश्न का उत्तर गलत नहीं माना जाता है। इसी प्रकार जब हम किसी पाप की आलोचना (Criticise, Repent) कर लेते हैं तो हमारे पाप निष्फल हो जाते हैं।

मूल पाठः

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं। इरियावहियं पडिक्कमामि
इच्छं, इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए,
गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे,
ओसा-उत्तिंग-पणग-दग-मट्टी-मक्कडासंताणा संकमणे,
जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया
चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया,
संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया,
ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया
तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थः

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं	हे भगवन् इच्छापूर्वक आज्ञा दीजिए
इरियावहियं पड़िक्कमामि	इर्यापथिक क्रिया का प्रतिक्रमण करुँ
इच्छं इच्छामि पड़िक्कमिउ	निवृत होने के लिए आज्ञा चाहता हूँ
इरियावहियाए, विराहणाए	इर्यापथ सम्बन्धी विराधना
गमणा गमणे, पाणक्कमणे	गमन करने में, प्राणी को दबाने में
बीयक्कमणे, हरियक्कमणे	बीज को दबाने में, वनस्पति को दबाने में

ओसा उतिंग	ओस को, कीड़ी आदि के बिल को
पण्णादग, मट्टी, मक्ड़ा	5 वर्ण की काई, जल मिट्टी, मकड़ी के जाल
सतांणा, संकमणे	कुचलने से, मसलने से
जे में जीवा विराहिया	जो जीव मैंने पीड़ित किये हों
एंगदिया, बेइदिंया, तेइदिंया चउरिंदिया, पंचिदिया	1, 2, 3, 4, 5, इन्द्रियों वाले
अभिहया, वत्तिया, लेसिया	सामने से आते हुए रोकें हो, धूल से ढके हों, आपस में मसले हों।
संघाइया, संघट्टिया	इक्टठे किये हों, छूए हों
परियाविया, किलामिया	परितापना दी हो, थकाए हों
उद्दविया	हैरान किया हो
ठाणाओ ठाणं	एक स्थान से दूसरे स्थान पर
संकामिया	रक्खे हों
जीवियाओ ववरोविया	जीवन से रहित किये हो
तस्स मिच्छा मि दुक्कडं	मेरे वैसे पाप निष्फल हों

प्र. विराधना किसे कहते हैं?

उ. व्रत को दूषित करने वाली प्रवृत्ति तथा विधि के अनुसार आचरण नहीं करना विराधना है, जीवों को दुःख पहुँचाने वाली क्रिया भी विराधना है।

प्र. आराधना किसे कहते हैं?

उ. जिनेश्वर देवों की जैसी आज्ञा है, वैसे ही आचरण करना।

प्र. जीव-विराधना न हो इसका उपाय क्या है?

उ. यतना रखना।

प्र. यतना किसे कहते हैं?

उ. जीव-विराधना का प्रसंग न आवे, इसका पहले से ही ध्यान रखना तथा प्रसंग आने पर जीव-विराधना टालने का प्रयत्न करना।

प्र. क्या 'मिच्छामि दुक्कडं' कहने से ही पाप धुल जाते हैं?

उ. नहीं। बिना मन केवल जीभ से कहने पर पाप निष्फल नहीं होते। मन से पश्चाताप पूर्वक कहने से पाप अवश्य ही निष्फल हो जाते हैं।

कायोत्सर्ग-सूत्र

इस पाठ में हम कायोत्सर्ग करते हैं। इसके द्वारा हम शरीर और आत्मा के भेद को समझते हुए, शरीर को स्थिर करते हैं और सिर्फ आत्मा का चिन्तन करते हुए अपने लगे हुए पाप कर्मों को आत्मा से हटाने का प्रयास करते हैं। क्योंकि कुछ क्रियाए शरीर की स्वभाविक रूप से चलती रहती हैं, जिन्हें हम रोक नहीं सकते हैं अतः इस पाठ में उन क्रियाओं का आगार (Exception) रखा गया है। यह पाठ ध्यान प्रक्रिया के लिए किया जाता है।

मूल पाठः

तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं
विसोहि करणेणं, विसल्ली करणेणं
पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं,
अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं,
खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं,
वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए,
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं,
अभग्गो, अविराहिओ, हुज्ज में काउसग्गो,
जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि,
ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि ॥

अर्थः

तस्स उत्तरी करणेणं	उस [पापयुक्त आत्मा] की उत्कृष्टता के लिए
पायच्छित करणेणं	प्रायश्चित करने के लिए
विसोहि करणेणं	विशुद्धि करने के लिए
विस्ली करणेणं	शल्य का त्याग करने के लिए
पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए	पाप कर्मों का नाश करने के लिए
ठामि काउस्सगं	कायोत्सर्ग करता हूं
अन्नत्थ	आगे कहे जाने वाले [आगार]

ऊससिएणं, नीससिएणं	उच्छवास से, निःश्वास से
खासिएणं, छीएणं	खांसी से, छींक से
जंभाइएणं, उड्एणं	जंभाई-उवासी से, डकार से
वायनिसग्गेणं	अपान वायु से
भमलीए, पित मुच्छाए	चक्कर आने से, पित्त विकार की मूर्छा से
सुहुमेहिं अगं संचालेहि, सुहुमेहिं खेल सचांलेहि	सुक्ष्म अंग के संचार से, सुक्ष्म कफ के संचार से
सुहुमेहिं दिट्ठि सचांलेहिं	सुक्ष्म दृष्टि के संचार से
एवमाइएहि आगेरिहं	इत्यादि अपवादो से
अभग्गो अविराहिओ	अभग्न विराधना रहित
हुज्ज में काउस्सगो	मेरा कायोत्सर्ग हो
जाव अहिंताणं, भगवताणं	जब तक अरिहंत भगवान को
नमुक्कारेणं	नमस्कार
न पारेमि	नहीं पारुगां
ताव कायं ठाणेण, मोणेणं झाणेणं	तव तक शरीर को स्थिर कर मौन रहकर, ध्यान रखकर
अप्पाणं वोसिरामि	अपने को [पापकर्मों से] अलग करता हूँ

प्र. इसे उत्तरीकरण का पाठ क्यों कहते हैं?

उ. इससे आत्मा को विशेष उत्कृष्ट बनाने के लिए कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा की जाती है।

प्र. कायोत्सर्ग में आगार क्यों रखे जाते हैं?

उ. क्योंकि जीव-रक्षा आदि के लिए कायोत्सर्ग बीच में छोड़ना पड़ता है तथा कायोत्सर्ग में श्वास आदि रोके नहीं जा सकते।

प्र. शल्य किसे कहते हैं?

उ. शल्य अर्थात् काँटा। आत्मा के भीतर लगा हुआ घाव, शल्य जिससे आत्मा पीड़ित होती रहती है।

चतुर्विंशति-स्तव-सूत्र

इस पाठ में हम हमारे 24 तीर्थंकरों के अनेकों गुणों को याद करते हैं। उनकी प्रशंसा करते हैं। उनके नामों का स्मरण करते हैं और हम ऐसी आशा करते हैं कि उनके गुणों का स्मरण करने से हमें पूर्ण आत्मशान्ति, रत्नत्रय की प्राप्ति तथा समाधि लाभ मिलेगा।

मूल पाठः

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली ॥1॥

उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं चं
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥2॥

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंस वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वदामि ॥3॥

कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥4॥

एवं मए अभित्थुआ, विहूयरयमला, पहीणजरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥5॥

कित्तियवंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरुग्गबोहीलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु ॥6॥

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥7॥

अर्थः

लोगस्स उज्जोयगरे	लोक को उधोत करने [चमकाने] वाले
धम्म तित्थयरे जिणे	धर्म तीर्थ के कर्ता और जिन [राग-द्वेष के विजेता]
अरिंहते कित्तइस्सं चउवीसंपि केवली	24 केवली अरिहतों [तीर्थंकरो] का कीर्तन करुंगा।
उसभ मजियं च वंदे	ऋषभ देव और अजित को वंदन करता हूँ।
संभवमभिणंदणं च सुमइं चं	संभव, अभिनन्दन, सुमति

पउमाप्पहं, सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे	पदमप्रभु, सुपार्श्व और चन्द्र प्रभु भगवान को वन्दना करता हूँ।
सुविहिं च पुप्फदंतं सीअलसिज्जंस वासुपुज्जं च	सुविधि, [पुष्पदन्त], शीतल, श्रेयांस, वासुपुज्य
विमिल, मणंतं च जिणं धम्मं संतिं च वंदामि	विमल, अनन्त, धर्मनाथ और शान्ति नाथ भ. को वन्दना करता हूँ।
कुंथु अरं चमल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमि जिणं च	कुंथुनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसव्रत, नमिनाथ
वंदामि रिट्ठनेमि, पासं तह वद्धमाणं च	अरिष्टनेमि, पार्श्वनाथ तथा वर्धमान [महावीर] को भी वदंना करता हूँ।
एवं मए अभित्थुआ, विहूयरयमला पहीणजरमरणा चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा में पसीयतुं	पाप मल से रहित जन्म-मृत्यु से मुक्त 24 तीर्थकरो [जिनवरों] की जो मैं ने स्तुति की है, वे मुझ पर प्रसन्न हो।
कितिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा आरोग्य बोहीलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु	कीर्तन, वन्दन, पूजित किये हुए लोक में उत्तम सिद्ध भ. मुझे आरोग्य [कर्मरोगों से मुक्ति] और समाधि प्रदान करे।
चंदेसु निम्मलयरा आइच्चेसु अहियं पयासयरा सागरवर गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु	चन्द्र से भी अधिक निर्मल सूर्य से भी अधिक प्रकाश करने वाले, सागर से भी अधिक गम्भीर सिद्धभगवान मुझको सिद्ध [मोक्ष] देवें [प्रदान करे]।

प्रणिपात-सूत्र [शक्र-स्तव-सूत्र]

इस पाठ में अरिहंत भगवन्तों (तीर्थंकर भगवन्तों) को नमस्कार किया गया है और उनमें क्या-2 गुण है तथा उन्होंने किस-किस प्रकार हमारे ऊपर परोपकार किया है। इन सब का वर्णन है।

मूल पाठः

नमोत्थुणं, अरिहंताणं, भगवंताणं,
आइगराणं, तित्थयराणं, सयं संबुद्धाणं,
पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरिसवरगंधहत्थीणं,
लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं,
अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं,
सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं,
धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं,
धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंत चक्कवट्टीणं,
दीव-ताण-सरणगइ-पइट्ठाणं,
अप्पडिहय वर नाण दंसण धराणं, वियट्टछउमाणं,
जिणाणं, जावयाणं, तिण्णाणं, तारयाणं,
बुद्धाणं, बोहयाणं, मुत्ताणं, मोयगाणं,
सव्वन्नूणं, सव्वदरिसीणं, सिव-मयल-मरूअ-मणंत-मक्खय-मव्वबाह
मपुणरावित्ति सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं संपत्ताणं,
नमो जिणाणं जियभयाणं।

अर्थः

नमोत्थुण, अरिहंताणं, भगवंताणं	अरिहंत भगवन्तों को नमस्कार हो
आइगराणं, तित्थयराणं	धर्म की आदि, धर्म तीर्थ की स्थापना करने वाले
सयं-संबुद्धाणं	स्वयं सम्यकबोध को पाने वाले
पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरिसवरगंधहत्थीणं	पुरुषों में श्रेष्ठ, सिंह, कमल व गन्ध हस्ती के समान

लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं	लोक में- उत्तम, नाथ, हितकारी, दीपक, ज्ञान के उधोत के समान हैं।
अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं	अभय, नेत्र, धर्ममार्ग, शरण, जीवन व बोधि के दाता हैं।
धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर	धर्म के दाता, उपदेशक, नायक व सारथि श्रेष्ठ हैं
चाउरतं चक्कवट्टीणं	चारगति का अंत करने वाले चक्रवर्ती
दीव ताण-सरण गई पइट्ठाणं	द्वीप के समान त्राणभूत, शरणभूत अजयभूत (ससांर रूपी समुद्र में)
अप्पडिहय वर नाण दंसण धराणं, वियट्टछउमाणं	अप्रतिहर, श्रेष्ठ ज्ञान व दर्शन को धारण करने वाले व छद्म् भल से रहित है।
जिणाणं, जावयाणं, तित्ताणं, तारयाणं	जितने वाले, जिताने वाले (रागद्वेष को), तरे हुए, तारने वाले (संसार से)
बुद्धाणं, बोहयाणं, मुत्ताणं, मोयगाणं	बोध को प्राप्त (स्वयं), बोध कराने वाले (दूसरों को) मुक्त (स्वयं) व मुक्त कराने वाले हैं (औरों को)
सव्वन्नूणं, सव्वदरिसीणं	सर्वज्ञ, सर्वदर्शी हैं।
सिव-मयल-मरूअ-मणंत-मक्खय-मव्वबाह	उपद्रव रहित, अचल, स्थिर, रोग रहित, अन्त रहित, अक्षय व बाधा रहित हैं।
मपुणरावित्ति सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं संपत्ताणं	पुनरागमन से रहित, सिद्ध-गति नामक स्थान को प्राप्त करने वाले
नमो जिणाणं जियभयाणं	भय के जीतने वाले, ऐसे जिन भगवान को नमस्कार हो।

सामायिक सम्बंधित 32 दोष

जैसा कि पहले हम बता चुके हैं कि जैन धर्म में सामायिक की साधना एक बहुत उत्तम और सटीक साधन है, मोक्ष की तरफ बढ़ने का। अभी तक हमने जाना कि सामायिक करते समय किन-किन सूत्रों (पाठों) का विधिपूर्वक उच्चारण करना चाहिए। परन्तु इन सब के बावजूद भी शुद्ध सामायिक के लिए हमें निम्न लिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए। अगर हम इन बातों का ध्यान नहीं रखेगें तो हमारी सामायिक अशुद्ध कहलाएगी और इन्हें ही हम सामायिक के 32 दोष कहते हैं। अतः हमें ये 32 दोष टालकर (Avoid) सामायिक करनी चाहिए।

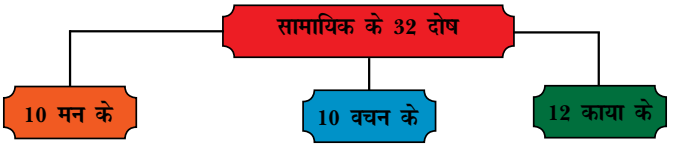

	मन के 10 दोष	वचन के 10 दोष	काया के 12 दोष
S. No.	Mental Violations	Verbal Violations	Physical Violations
1.	To be Disrespectful,	To use Abusive Words,	To Sit at an Unsuitable Place,
2.	To be Greedy for Fame,	To use Alarming Words,	Not To sit Steady,
3.	To be Greedy for Gains,	To say Non-Religious Words,	To Walk Every Now and Then,
4.	To be Proud,	To speak Inadequate,	Doing Home Work,
5.	To be in Fear,	To use Words to Incite Fight,	To Stretch the Body,
6.	To Expect the Rewards,	To Gossip,	To Lean against a Support,
7.	To Doubt the Rewards,	To Make Fun,	Being Lazy,
8.	To be in Anger,	To Pronounce Improperly,	Cracking Knuckles,
9.	To be Rude,	To use Irrational Words,	To Clean Body Dirt,
10.	To Despise.	To Jargon.	To Scratch Body,
11.			To Make Vulgar Postures,
12.			To Sleep.

Though it may look difficult, it is not impossible to do samayik the right way.

चार गतियों में भ्रमण के कारण व निवारण

जैसा कि आपको पहले बताया है कि कोई भी आत्मा, जब तक कि वह पूर्ण (Completely) रूप से कर्मो से मुक्त नहीं हो जाती वह 4 गतियों, (नरक, तिर्यंच, मनुष्य व देवगति) में भ्रमण करती रहती है।

A नरक की स्थितिः

1. नरक में दुःख ही दुःख हैं। यहां की धरती का स्पर्श ऐसा है मानो हजारों बिछुओं ने एक साथ काट लिया हो।
2. नरक में प्यास बुझाने के लिये न पानी है और न ही भूख के लिए अनाज है।
3. नरक में गर्मी और सर्दी दोनों ही अत्यधिक होती है।
4. वहां पर शरीर के पारे (Mercury) की तरह टूकड़े-2 होते रहते हैं।

नरक में जाने के मुख्य कारण

1. **महाहिंसा (Excessive Violence):** क्रूर (Cruel) बनकर पशु, पक्षी या मनुष्यों की अत्यधिक हिंसा करना। इस संसार में प्रत्येक प्राणी को अपना जीवन प्यारा है। इसलिए अपने सुख व शौक के लिए दूसरे जीवों को मारना, नरक के station का Ticket Reserve कराने के समान है। मांस-मदिरा का प्रयोग भी इसमें शामिल है। हमें भ. की वाणी याद रखनी चाहिए, Live & Let Live। अतः आज हमें निम्नलिखित प्रतिज्ञा (Oath) लेनी चाहिए (नरक में जाने से बचने के लिए)।

1) Be a vegetarian through out the life.
2) In any hotel, before ordering I will check that food is vegetarian.
3) To buy & eat the items having green dots.
4) Will not use any beauty product that are made of animals being.

2. **महापरिग्रह (Unlimited Acquisitions):** नरक में जाने का दूसरा मुख्य कारण महा-परिग्रह है। अतः हमें निरर्थक धन, जमीन, कपड़े, जूते, जेवर आदि का सग्रंह (Collection) नहीं करना चाहिए। हमें जितनी जरूरत है उतना ही रखना चाहिए। बाकी गरीबों को दान देना चाहिए।

3. **माँसाहारः** माँसाहार भी नरक बंध का कारण है, इससे हमारा दया भाव समाप्त हो जाता है।

4. **पंचेन्द्रिय वधः** हमें नरक में जाने से बचने के लिए पंचेन्द्रिय वध नहीं करना चाहिए।

B तिर्यंच की स्थितिः

तिर्यंच के जीव भी दुःख ही उठाते रहते हैं। पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, पानी अग्नि आदि सभी तिर्यंच कहलाते हैं। तिर्यंच से बचने के मुख्य 2 उपाय हैं। हमें 2 बुराईयों से बचना होगा (1) कपट (Deceit) (2) झूठ (Lie)

1. कपटः When we are not true to our thoughts, speech or actions, we are indulging in deceit, यानि जिस मनुष्य के सोचने में, बोलने में या करने में फर्क होता है वह कपटी कहलाता है।

2. झूठः झूठ बोलने से भी जीव नरक में जाता है। झूठ सभी समझते कि क्या होती है। सच नहीं बोलकर जब अन्य कुछ बोलते हैं तो वह झूठ है। जैसे आप झूठा खाना नहीं खाना चाहते वैसे ही आपकी झूठ को कोई भी स्वीकार नहीं करना चाहता है। अतः हमें कभी भी हँसी मजाक या गुस्से में, लालच के कारण, भय के कारण, दूसरों को नीचा (Humiliate) दिखाने के लिए झूठ नहीं बोलना चाहिए।

C मनुष्य गतिः

हम सभी मनुष्य गति के जीव हैं। अगर हमें मनुष्य जन्म ही पाना है तो अपने जीवन में 4 चीजों को करना होगा।

(1) दया करने से (By Practising Compassion)।
(2) सरल बनने से (By Practising Simplicity)।
(3) विनम्र होने से (By Practising Humility)।
(4) इर्ष्या नहीं करने से (By Avoiding Jealously)।

D देवगतिः

देवगति में जीव सुख भोगता है। यहां दुःख नहीं होता है। देवगति प्राप्त करने के कुछ उपाय।

(1) साधु बनकर और 5 महाव्रतों का पालन करने से।
(2) श्रावक बनकर और श्रावक के 12 व्रतों का पालन करने से।
(3) उपवास, आयम्बिल, एकासना तप आदि करने से।

श्रावक के 12 व्रत

मुख्यव्रत (5)	गुणव्रत (3)	शिक्षा व्रत (4)
♦ अहिंसा अणुव्रत	♦ दिशा परिमाण	♦ सामायिक
♦ सत्य अणुव्रत	♦ भोगोपभोग परिमाण	♦ देशावगासिक
♦ अचौर्य अणुव्रत	♦ अनर्थदंड विरमण	♦ पौषध
♦ ब्रह्मचर्य अणुव्रत		♦ अतिथि संविभाग
♦ अपरिग्रह अणुव्रत		

जैसा कि पहले बताया है कि भ. महावीर ने मोक्ष प्राप्त करने के 2 मार्ग बताए हैं। एक है साधुमार्ग और दूसरा है श्रावक मार्ग। भ. ने कहा कि यदि हम कुछ व्रत या नियमों का पालन करते हुए अपना जीवन चलाएंगे तो हम गृहस्थ Worldly Life में रहकर भी अपना कल्याण कर सकते हैं। इन व्रतों व नियमों को श्रावक के 12 व्रतों के नाम से जाना जाता है। इन 12 व्रतों को भी 3 Category में बांटा गया है। जैसा कि ऊपर दर्शाया गया है। पहले 5 मुख्यव्रत हैं जो कि साधुओं के व्रतों का ही Small रूप हैं। इसमें हमें बहुत सारी Exceptions होती हैं, जबकि साधुओं के लिए इन व्रतों में कोई Exceptions नहीं होती हैं। बाकी के व्रत इन 5 व्रतों की Support व Help के लिए हैं। अब हम इन व्रतों को परिभाषित करते हैं।

1. **अहिसा अणुव्रतः** इस व्रत में हम प्रतिज्ञा (Vow) लेते हैं कि हम किसी भी जीव को जिसने कोई अपराध नहीं किया है, उसे हम जान बुझकर नहीं मारेंगे और न ही किसी को मारने की लिए कहेंगे। (यहां पर भगवान् ने हमें अपना जीवन निर्वाह करने के लिए एकेन्द्रिय जीवों– जैसे भोजन के लिए वनस्पतिकाय आदि के जीवों की हिंसा की छूट दी है) परन्तु यहां पर भी हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि एकेन्द्रिय जीवों (पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु, वनस्पति) की भी अनावश्यक हिंसा न हो। वह भी कम से कम हो। हमें हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि वे भी हमारे जैसे जीव हैं और उनकी हिंसा से उन्हें भी वेदना होती है। इस व्रत के पालन हेतु हम अलग से एक पाठ अनाश्वयक हिंसा के नाम से आगे दे रहे हैं उसे भी आप समझें।

2. **सत्य अणुव्रतः** हमें ऐसा असत्य (Lie) नहीं बोलना चाहिए जिससे सामने वाले को किसी प्रकार की पीड़ा या कष्ट हो। हमें अपने हर Action में Truth का पालन करना चाहिए।

3. **अस्तेय अणुव्रतः** अस्तेय का अर्थ है कि बिना Permission के किसी की भी

वस्तु को लेना या उठाना। अतः हमें ऐसी चोरी आदि नहीं करनी, जिससे हमारी निन्दा हो या बदनामी हो और Punishment मिलने का भय हो।

4. **ब्रह्मचर्य अणुव्रतः** इस व्रत का अर्थ है, शादी से पूर्व पूर्ण Celibacy का पालन करना और शादी के बाद अपनी Wife या Husband के सिवाय किसी अन्य से कोई भी Illicit Relation नहीं रखना। और न ही किसी अन्य को कामुकता की दृष्टि से देखना।

5. **अपरिग्रह अणुव्रतः** इस का अर्थ है कि हमें कम से कम परिग्रह (Possession) रखना चाहिए। जैसे Ornaments, Houses, Money, Clothes etc. हमें यह सब Limit में रखने चाहिए। हमें जितनी आवश्यकता हो उतना ही हम रखें, बाकी हमें गरीबों की सहायता में लगाना चाहिए। इस व्रत का पालन करने से समाज में समानता भी आती है और गरीब लोगों का जीवन स्तर भी ऊँचा उठता है।

6. **दिशा-परिमाण व्रतः** इस व्रत में हम Different Directions में जाने की Limit बना लेते हैं। इसका Purpose यही है कि जैसा कि हम जानते है कि हम जितना अधिक घूमेंगे-फिरेगें उतना ही अधिक पाप कार्यों में संलग्न रहने की सम्भावना रहती है। अतः हम अपने को एक सीमा में रखकर पापों को कम कर लेते हैं।

7. **भागोपभोग परिमाण व्रतः** इस व्रत में हम ऐसे व्यापारों (Businesses) का त्याग करते है, जिसमें ज्यादा हिंसा होती हो और भोजन, वस्त्र एवं उपयोग में लाने वाली वस्तुओं की Limit करते हैं।

8. **अनर्थ दंड-विरमण व्रतः** इसमें हम Purposeless हिंसा का त्याग करते हैं।

9. **सामायिक व्रतः** जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि जैन दर्शन में मोक्ष प्राप्ति के लिए सामायिक एक बहुत बड़ा साधन है, अतः श्रावक को 48 मिनट के लिए एक सामायिक अवश्य करनी चाहिए

10. **देशावकाशिक व्रतः** इस व्रत में हम कुछ समय के लिए अपने नियमों की सीमा को अधिक Tight कर देते हैं। जैसे आपने देखा होगा कि हाकी या फुटबाल के Match में वैसे तो खिलाड़ी पूरे मैदान में खेलते हैं, परन्तु जब Penalty Corner लगाना होता है तो सारे खिलाड़ी गोल Post की तरफ आ जाते है, और Playing Area बहुत Tight हो जाता है, ये ही स्थिति इस व्रत की है।

11. **पौषध व्रतः** इस व्रत के अंर्तगत हम 24 घंटे के लिए कुछ भी नहीं खाते हैं और धर्म-स्थान या एकान्त वास में रहकर, ससांर की सभी पाप क्रियाओं से मुक्ति पाकर साधु की तरह जीवन जीते हैं।

12. **अतिथि संविभाग व्रतः** इस व्रत के अंर्तगत हम किसी भी सुपात्र को निर्दोष दान देने की भावना रखते हैं।

आठ कर्म

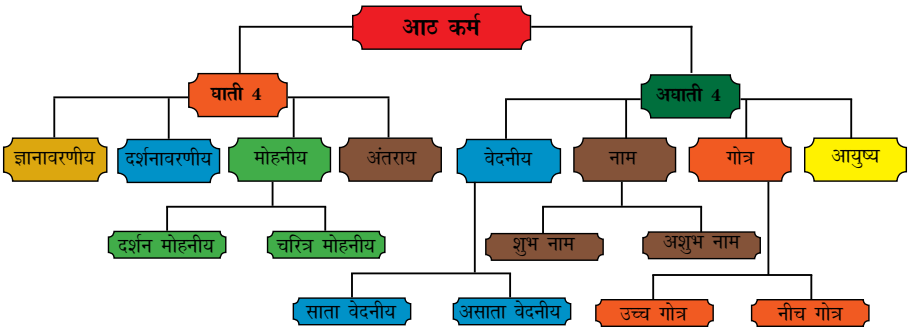

जीव के दो भेद हैं– सिद्ध और संसारी। ये दो भेद कर्मों के कारण हैं। सिद्ध जीव सर्व कर्मों से रहित होने से शाश्वत मोक्ष में विराजमान हैं। संसारी जीव आठ कर्मों से बंधे हैं। जैसे सूर्य पर बादल छा जाते हैं, दीवार पर रोगन चिपक जाता है और चिकने शरीर पर धूलि जम जाती है, उसी प्रकार यह जीवात्मा कर्मरूपी आवरण से ढ़क जाती है। कर्म अपने स्वभाव के अनुसार जीव को विभिन्न फल देते हैं।

जीव-आत्मा को कर्म करने व उसका फल भोगने के लिए शरीर के माध्यम की जरूरत होती है। शरीर में स्थित मन-वचन-काया रूपी तीन योगों के स्पन्दन (हलचल) से कर्मरूपी धूली आत्मा-प्रदेशों की तरफ आकृष्ट होती है और राग-द्वेष का बल पाकर वह आत्मा से चिपक जाती है। निश्चित समय आने पर कर्म आत्मा को शुभ-अशुभ फल देते हैं।

आत्मा के आठ गुण हैं- 1. अनन्त ज्ञान, 2. अनन्त दर्शन, 3. अव्याबाध (बाधा-रहित) सुख, 4. क्षायिक सम्यक्त्व, 5. अटल अवगाहना, 6. अमूर्तता, 7. अगुरुलघु भाव, 8. अनन्त बल।

इनका आवरण करने वाले कर्म भी क्रमशः आठ हैं- 1. ज्ञानवरणीय, 2. दर्शनावरणीय, 3. वेदनीय, 4. मोहनीय, 5. आयु 6. नाम, 7. गोत्र, 8. अन्तराय। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

1. **ज्ञानावरणीय कर्म-** आत्मा अनन्त ज्ञान का पुंज है। यह कर्म आत्मा के ज्ञान-गुण (विशेष

ज्ञान) पर पर्दा डालता है। इसका स्वभाव आंखों पर बंधी पट्टी के समान है।

2. **दर्शनावरणीय कर्म-** यह आत्मा के दर्शन-गुण (सामान्य ज्ञान) को रोकता है। इसका स्वभाव राजा का दर्शन रोकने वाले द्वारपाल के तुल्य है। नींद भी इसी कर्म के उदय से आती है।

3. **वेदनीय कर्म-** यह आत्मा को भौतिक सुख-दुख प्रदान करता है। इसका स्वभाव शहद से लिपटी हुई तलवार के समान है। पहले शहद का मजा, फिर जीभ कटने का दुःख। ऐसे ही सांसारिक सुख-भोग हैं।

4. **मोहनीय कर्म-** यह आत्मा के स्वरूप-दर्शन और स्वरूप-प्राप्ति में बाधा डालता है। सम्यक् श्रद्धा को रोकता है और चारित्र-प्राप्ति नहीं होने देता। इसका स्वभाव मदिरा के समान है। मिथ्यात्व, चार कषाय, विषय-वासना सब इसी के कारण हैं। यह सारे कर्मों का सेनापति है।

5. **आयु कर्म-** आत्मा स्वभाव से अजर-अमर है, किन्तु इस कर्म के कारण आत्मा शरीर-रूपी में जन्मती-मरती है। इसके होने से ही शरीर जीवित रहता है और इसके समाप्त होने से मृत्यु हो जाती है। इसका स्वाभाव कारागार (जेल) के समान है।

6. **नाम कर्म-** यह आत्मा को अनेक प्रकार के शरीर, इन्द्रिय, अंगोपांग, संस्थान (आकार) वर्ण आदि प्रदान करता है। इसका स्वभाव चित्रकार के तुल्य है।

7. **गोत्र कर्म-** यह आत्मा को ऊंचे, नीचे अनेकविध कुलों में जन्म दिलाता है। इसका स्वभाव कुम्हार के समान है। कुम्हार अच्छे बुरे दोनों प्रकार के घड़े बनाता है, ऐसे ही यह कर्म है।

8. **अन्तराय कर्म-** यह आत्मा की दान, लाभ, भोग, उपभोग और बल-रूप शक्तियों में बाधा डालता है। इसका स्वभाव राज-भण्डारी (खजांची) के तुल्य है।

इन आठ कर्मों में ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय, ये चार कर्म आत्मा के मूल गुणों का घात करते हैं, इसलिए ये घाती कर्म कहलाते हैं। इनको नष्ट करने के उपरान्त केवल-ज्ञान की प्राप्ति होती है। शेष चार कर्म अघाती हैं। ये शरीर से सम्बन्ध रखते हैं। ये केवल-ज्ञान होने में बाधा नहीं डालते। केवली भगवान की आयु पूरी होने पर ये चारों स्वतः समाप्त हो जाते हैं।

मेरी भावना

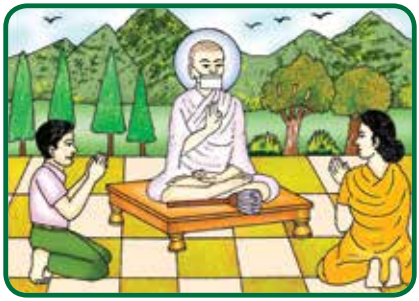

जिस ने राग द्वेष कामादि जीते सब जब जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह को उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, जिन हरिहर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो ॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पग डिगने पावे ॥

विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्य भाव धन रखते हैं।
निज पर के हित साधन में जो निश दिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत् के, दुःख समूह को हरते हैं ॥

होकर सुख में मग्न, न फूले, दुःख में कभी न घबरावे।
पर्वत, नदी, श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे ॥
रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट-वियोग, अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥

गुणी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥

अनावश्यक हिंसा

सभी तीर्थंकर भगवन्तों ने संसार के सब सूक्ष्म-स्थूल जीवों की रक्षा (हिंसा न करना) और दया (दुःखी जीव का दुख मिटाना) के लिए प्रवचन दिया है। सब धर्मों का सार भी यही है कि दण्ड (जीव-हिंसा) दुख-रूप है और दण्ड त्याग (अहिंसा) सुख-रुप है।

चूंकि यह सारा संसार सूक्ष्म-स्थूल जीवों से ठसाठस भरा है, इसलिए साधु-साध्वी को छोड़कर, गृहस्थ लोगों (श्रावक-श्राविका, सम्यक्त्वी या अन्य) के लिए सभी जीवों की हिंसा का परिपूर्ण त्याग शक्य नहीं है, फिर भी शक्ति-अनुसार जीव-हिंसा को टालना चाहिए।

शास्त्रकारों ने जीव-हिंसा के दो भेद किए हैंः अर्थहिंसा और अनर्थहिंसा। आवश्यक प्रयोजन के लिए की जाने वाली हिंसा अर्थहिंसा है, यथा-अपने लिए मकान बनाना, सचित जल का प्रयोग करना, भोजन हेतु आग जलाना, सब्जी काटना आदि। जिस हिंसा के पीछे कोई हेतु (कारण, उदेश्य) न हो, व अनर्थ हिंसा है, यथाः हरी घास पर सैर करना, फूल तोड़ना, नाली में या पेड़ों पर पत्थर फैंकना, मधुमक्खी आदि के छते में आग लगाना आदि।

हिंसा टालने के क्रमवार चरण

1. भ्रुण हत्या न करना/न कराना/न समर्थन करना। 2. मांसाहार नहीं करना। 3. अण्डा नहीं खाना। 4. मांस या अण्डे ये युक्त पदार्थ नहीं खाना। 5. चमड़े के जूत/चप्पल/सैण्डल एवं अन्य सामान का प्रयोग नहीं करना। 6. रेशम के वस्त्र नहीं पहनना। 7. कीड़ी, मच्छर, कोक्रोच, दीमक आदि को मारने के लिए दवा नहीं छिड़कना। 8. शहद का प्रयोग नहीं करना। 9. चांदी के वर्क लगी वस्तु नहीं खाना। 10. स्थावरकायः पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं वनस्पति काय की हिंसा नहीं करना।

इस क्रम से चलें और अपने जीवन से हिंसा को कम/समाप्त करते जायें।

हिन्दू कलैण्डर और जैन पर्व

महीना	जैन पर्व (त्यौहार)
चैत्र	महावीर-जयन्ती
वैशाख	अक्षय-तृतीया
ज्येष्ठ	
आषाढ	चातुर्मासी-पर्व
श्रावण	रक्षा-बन्धन
भाद्रपद	पर्युषण व दशलक्षण
आश्विन	आयम्बिल ओली
कार्तिक	वीर-निर्वाण-दिवस चातुर्मासी-पर्व
मार्गशीर्ष	
पौष	पार्श्व-जयन्ती
माघ	
फाल्गुन	चातुर्मासी-पर्व

प्रिय विद्यार्थियों! समय की गणना सैकण्ड, मिन्ट, घण्टा, दिन, सप्ताह, मास और वर्ष के द्वारा की जाती है। भारतवर्ष की प्राचीन पद्धति में काल-गणना पल, घड़ी, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष और युग के आधार से होती थी। विश्व में विभिन्न समयों और भिन्न-भिन्न स्थानों पर अनेक प्रकार के कलैण्डर प्रचलित हुए। ये सभी उस-उस समय की विशिष्ट घटनाओं की स्मृति को सुरक्षित रखने के लिए शुरु हुए। इस समय संसार में सर्वाधिक प्रचलित कलैण्डर ग्रीगेरियन है, जो जनवरी, फरवरी आदि के रूप में काल-गणना करता है। इसे English कलैण्डर भी कहते हैं। कुछ अन्य प्रचलित कलैण्डर ये हैं:—

1. **आर्य संवत्**— सृष्टि की रचना के प्रारम्भ से लेकर।
2. **वीर संवत् या जैन संवत्**— 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के उपलक्ष्य में। यह ईसा से 527 वर्ष पूर्व शुरू हुआ।
3. **विक्रम संवत्**— उज्जयिनी-सम्राट् वीर विक्रमादित्य के राज्य— सिंहासनारोहण के उपलक्ष्य में ईसा-पूर्व 57 में शुरू।
4. **शक संवत्**— ईसा के 78 वर्ष बाद शुरू।
5. **हिजरी संवत्**— पैगम्बर हजरत मुहम्मद की मक्का से मदीना की यात्रा (हिज़र) के उपलक्ष्य में ईसा के 579 वर्ष बाद शुरू।

भारतवर्ष में सभी धार्मिक व सांस्कृतिक पर्व विक्रम संवत् के आधार पर मनाए जाते हैं।

हर प्रकार के शुभ कार्य, विवाह, गृह-प्रवेश, उपनयन, क्रिया-कर्म आदि भी इसी के आधार पर आयोजित होते हैं। यह संवत् अंग्रेजी कलैण्डर के अनुसार मार्च या अप्रैल में शुरु होता है। इसमें 12 मास होते हैं, जिनके नाम ये हैं:— 1. चैत्र 2. वैशाख 3. ज्येष्ठ 4. आषाढ 5. श्रावण 6. भाद्रपद 7. आश्विन 8. कार्त्तिक 9. मार्गशीर्ष 10. पौष 11. माघ 12. फाल्गुन

प्रत्येक मास के दो पक्ष (विभाग) होते हैं, जो 15-15 दिन के होते हैं। प्रथम पक्ष कृष्ण-पक्ष या बदी कहलाता है और दूसरा पक्ष शुक्ल-पक्ष या शुदी। इन दोनों पक्षों की तिथियां एकम्, दूज, तीज आदि कहलाती है। शुक्ल पक्ष की 15वीं तिथि पूर्णिमा और कृष्ण पक्ष की 15वीं तिथि अमावस्या कहलाती है। शुक्ल पक्ष की रात्रि में चन्द्रमा क्रमशः बढ़ता रहता है और कृष्ण पक्ष में क्रमशः घटता जाता है। पूर्णिमा को चन्द्रमा पूरा गोल दिखता है, अमावस्याा को चन्द्रमा बिल्कुल भी दिखाई नहीं देता।

विक्रम संवत् चैत्र शुक्ला एकम् से शुरु होता है और चैत्र कृष्णा अमावस्या को समाप्त हो जाता है। समस्त जैन पर्व भी विक्रम संवत् के आधार से ही मनाए जाते हैं। कुल प्रमुख जैन पर्व ये हैं-

1. **महावीर-जयन्ती**— चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को। इस दिन बिहार प्रान्त के क्षत्रिय कुण्डग्राम में राजा सिद्धार्थ व रानी त्रिशला के घर 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का जन्म हुआ।

2. **अक्षय-तृतीय**— वैशाख शुक्ला तृतीया को। इस दिन प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का, दीक्षा-ग्रहण के एक वर्ष चालीस दिन के बाद, हस्तिनापुर नगर में, युवराज श्रेयांस कुमार के हाथ से, इक्षुरस के द्वारा पारणा हुआ।

3. **पर्यूषण-पर्व**— भाद्रपद कृष्णा 13 से भाद्रपद शुक्ला पंचमी तक आठ दिन निरन्तर मनाए जाते हैं। जैन लोग इन आठ दिनों में विशेष धर्माराधना, जप, तप आदि करते हैं। आठवां दिन 'महापर्व संवत्सरी' कहलाता है, जिसे क्षमापर्व भी कहते हैं। इस दिन जीव-मात्र से अपनी भूलों के लिए क्षमा ली और दी जाती है। दिगम्बर सम्प्रदाय में पर्यूषण-पर्व न मनाकर 'दस लक्षण पर्व' मनाए जाते हैं, जो भाद्रपद मास की पंचमी तिथि से प्रारम्भ होकर चतुर्दशी को समाप्त होते हैं। चतुर्दशी तिथि को 'अनन्त चतुर्दशी' बोलते हैं।

4. **दीपावली**— कार्तिक कृष्णा अमावस्या को। इस दिन पावापुर नगरी में भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण हुआ था। उनके भाव-आलोक (दिव्य ज्ञान) की स्मृति में वहां उपस्थित अनेक राजाओं ने अगले दिन द्रव्य-आलोक (दीप-माला) किया था, उसी स्मृति में यह पर्व मनाते हैं।

विशेषः— जैन साधक अपने पर्वों को खान-पान, मौज-शौक, सैर-सपाटा एवं आतिशबाजी आदि से आडम्बर-पूर्वक न मनाकर विशेष तप, जप एवं त्याग-साधना द्वारा मनाते हैं।

जैन तप-विधि

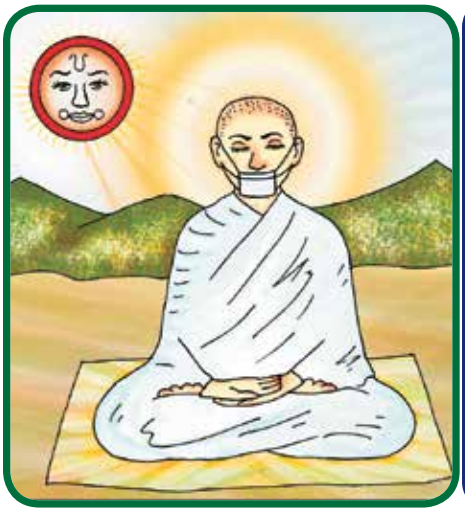

प्रिय विद्यार्थियों! आप जानते ही है कि जैन-साधना-पद्धति बड़ी कठोर है। इसमें शरीर की सुविधाएं और संसार के ऐशो-आराम का त्याग किया जाता है। यह शरीर को साधना की भट्टी में तपाकर सच्चा आत्मिक वैभव प्राप्त करने की प्रक्रिया है। कई विचारकों ने कहा है कि जैनों की तपस्या हाडों की लड़ाई है अर्थात् इसे करने के लिए ऊपर से नीचे तक शरीर का पूरा जोर लगाना पड़ता है। जैन शास्त्रों में अनेक प्रकार की तपस्याओं का वर्णन आता है, यथा

1. **रात्रि-चौविहार–** सूर्यास्त के पश्चात् सम्पूर्ण रात्रि तक कुछ भी न खाना, न पीना।
2. **नवकारसी–** सूर्योदय के पश्चात् 48 मिनट तक कुछ भी नहीं खाना-पीना।
3. **पौरसी–** सूर्योदय के पश्चात् एक प्रहर (दिन का 1/4 भाग) तक कुछ भी न खाना-पीना।
4. **एकाशना–** दिन में केवल एक बार, एक जगह बैठकर भोजन करना। पहले और बाद में प्रासुक पानी पी सकते हैं।
5. **एकल ठाण–** दिन में केवल एक बार, एक ही जगह बैठ कर भोजन और जल ग्रहण करना।
6. **आयम्बिल–** घी एवं नमक- रहित चने, रोटी या मुरमुरे (चावल के परमल) पानी में भिगोकर दिन में केवल एक बार खाना। पहले और बाद में पानी पी सकते हैं।

7. **उपवास**— दिन-भर केवल पानी के सिवाय, सभी प्रकार के खाद्य, पेय पदार्थों का त्याग करना।

8. **पौषध**— सम्पूर्ण दिन (24 घण्टे) सामायिक की वेषभूषा में उपवास करना।

दो दिन तक पूर्वोक्त एकाशन आदि करने को बेला (यथा-एकाशना का बेला), तीन दिन के लिए तेला, 5 दिन को पचौला, आठ दिन की अठाई, एक मास तक करने को मास-खमण कहते हैं। सम्पूर्ण एक वर्ष तक एक दिन उपवास, एक दिन पारणा (भोजन करना) करने को वर्षीतप कहते हैं। कई साधक कई-कई वर्ष तक वर्षीतप की साधना करते हैं।

9. **संथारा**— जब साधक का शरीर सर्वथा असमर्थ हो जाए, उठने, बैठने आदि आवश्यक क्रियाएं करने में भी पीड़ा का अनुभव करने लगे तथा जीवन का अन्तिम क्षण समीप दिखाई देने लगे, तब जीवन-भर के सभी दोषों/पापों की आलोचना करके, सब जीवों से अपनी भूल-चूक की क्षमा-याचना करके, सब प्रकार के भोजन (या पानी भी) का त्याग करके, मृत्यु की प्रतीक्षा करते हुए रहना संथारा कहलाता है। जैन इतिहास में 1, 2, 3 दिन से लेकर 1, 2 या 3 मास तक के संथारों का विवरण मिलता है। सन् 1987 में सोनीपत मण्डी में घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. ने 72 दिन का ऐतिहासिक संथारा किया था।

कई लोग ये कुशंका करते हैं कि संथारा करना आत्महत्या है। यह उनका कोरा भ्रम है। आत्महत्या के मूल में क्रोध या वैर की भावना होती है, भय और बदनामी का डर होता है या फिर अतृप्त काम-वासना का प्रसंग रहता है। इसके विपरीत संथारा मृत्यु की एक अति उत्तम कला है। इसमें किसी प्रकार की लालसा, भय या जोर-जबरदस्ती की भावना नहीं होती। प्रत्येक जैन साधक प्रतिदिन, मृत्यु का क्षण आने पर, संथारा प्राप्त करने की उत्तम भावना (मनोरथ) भाता है।

जैन शास्त्रों में दूसरे प्रकार से भी तप के दो भेद किए गए हैं— 1. बाह्य तप (शरीर द्वारा साध्य) 2. आभ्यन्तर तप (मन द्वारा साध्य) बाह्य तप के 6 भेद हैं— 1. अनशन (भोजन का त्याग), 2. ऊनोदरी (भूख से कम खाना), 3. भिक्षाचरी (भिक्षा में या थाली में जो आए, समभाव से खाना), 4. रस-परित्याग (भोजन में रस लेकर न खाना), 5. काय-क्लेश (अनेकविध आसनों व सदी-गर्मी की आतापना से शरीर को साधना), 6. प्रतिसंलीनता (शरीर व इन्द्रियों को वश में रखना)। आभ्यन्तर तप के भी 6 भेद हैं- 1. प्रायश्चित (त्रुटि/अपराध का दण्ड स्वीकार करना), 2. विनय, 3. वैयावृत्य (सेवा), 4. स्वाध्याय (धर्मग्रन्थों का अध्ययन), 5. ध्यान, 6. व्युत्सर्ग (शरीर कषाय, उपकरणों का त्याग)

भगवान ऋषभदेव

जैन परम्परा में काल के दो भाग किए गए हैं– उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। उत्सर्पिणी में जीवों की आयु, अवगाहना (कद) व शक्ति में तथा प्रकृति के वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श गुण में क्रमशः उन्नति होती है। प्रत्येक काल-विभाग में छह-छह आरे (विभाग) होते हैं। वर्तमान में अवसर्पिणी काल का पांचवां विभाग (दुःषमा आरा) चल रहा है। तीसरे काल-विभाग की बात है। कुलकर नाभि के घर माता मरुदेवी की कुक्षि से ऋषभदेव का जन्म हुआ। ऋषभ कुमार बड़े हुए। उन्होंने सुमंगला और सुनन्दा के साथ विवाह किया। सुमंगला के एक कन्या ब्राह्मी और भरत आदि 99 पुत्र हुए। सुनन्दा ने एक पुत्री सुन्दरी और एक पुत्र बाहुबली को जन्म दिया।

भगवान ऋषभ के समय में न समाज था, न कोई स्वामी था और न कोई सेवक। कल्पवृक्षों से लोगों के जीवन की आवश्यकताएं पूरी हो जाती थी। अधिकांश लोग अरण्यवासी थे। ऋषभदेव उस युग के प्रथम राजा बने। उनकी जन्मजात प्रतिभा से लोग नए युग के निर्माण में जुट गए। अनेक नगर बसाए गए। लोग अरण्यवास छोड़कर नगरों में रहने लगे। उन्होंने लोगों को असि (सुरक्षा), मसी (व्यवसाय), कृषि (खेती), सेवा आदि कर्त्तव्यों का निर्देश दिया। अपने पुत्र भरत को 72 कलाएं सिखाई। अपनी पुत्री ब्राह्मी को 18 लिपियों और सुन्दरी को गणित आदि का अध्ययन करवाया। विश्व इतिहास में स्त्री-शिक्षा और नारी-आत्मनिर्भरता का ये प्रथम प्रयास था। प्रभु द्वारा प्रदत्त ज्ञान से सब लोग अपने-अपने कार्यों में दक्ष बन गए और सुखपूर्वक रहने लगे। उन्होंने लम्बे समय तक राज्य किया। अन्त में अपने सौ पुत्रों को अलग-अलग राज्यों का भार सौंपकर मुनि बन गए।

भगवान के साथ चार हजार अन्य पुरुषों ने भी दीक्षा ली। परन्तु वे सभी कठोर जैन-साधना का पालन नहीं कर सके, अतः जैन साधु का वेष छोड़कर अन्य साधु-संन्यासियों के वेष में रहने लगे।

चूंकि वह समय धर्म, सभ्यता और संस्कृति का आदिम युग था, अतः जैन साधुओं को भिक्षा-दान की विधि को कोई नहीं जानता था। प्रभु ऋषभ भी निरन्तर एक वर्ष तक भिक्षा-हेतु इधर-अधर घूमते रहे। कोई उन्हें हीरे-मोती, कोई उन्हें हाथी-घोड़े, कोई उन्हें महल-बावड़ी, कोई उन्हें दास-दासी, यहां तक कि कोई-कोई तो उन्हें अपने पुत्र-पुत्रियों को भी भेंट में देने लगता था, पर प्रभु ने कोई वस्तु ग्रहण नहीं की। अन्त में 13 महीने 10 दिन की निर्जल, निराहार साधना के पश्चात् वैशाख सुदी तृतीया (अक्षय तृतीया) के दिन हस्तिनापुर में युवराज श्रेयांस कुमार

के हाथों से इक्षुरस के द्वारा प्रभु का पारणा हुआ।

कुल एक हजार वर्ष की साधना के बाद प्रभु ऋषभ को कैवल्य प्राप्त हुआ। चतुर्विध तीर्थ की स्थापना कर वे इस युग के प्रथम तीर्थंकर हुए। उनके 98 पुत्रों ने राज्य का त्याग कर उन्हीं के पास दीक्षा ग्रहण कर ली। भरत, बाहुबली, ब्राह्मी, सुन्दरी ने भी संयम ग्रहण किया। सभी ने केवल ज्ञान प्राप्त कर अपनी आत्मा का कल्याण किया। भगवान ऋषभ एक लाख पूर्व वर्ष तक श्रामण्य (साधु-धर्म) का पालन कर निर्वाण का प्राप्त हो गए।

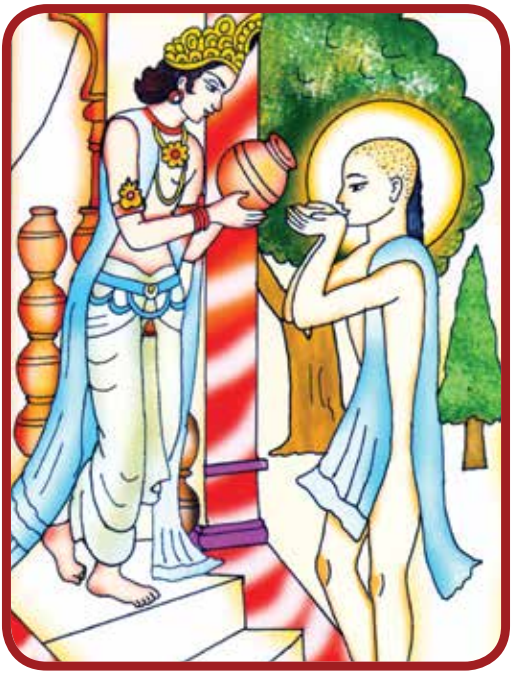

भगवान ऋषभदेव के 84 गणधर, 84,000 साधु व ब्राह्मी, सुन्दरी आदि 3,00,000 साध्वियाँ, श्रेयांस आदि 3,05,000 श्रावक, सुभद्रा आदि 5,54,000 श्राविकाएं थीं।

भगवान ऋषभदेव जैन धर्म के ही नहीं विश्व की विभूति थे। वैदिक धर्म में भी ऋषभदेव को अवतार माना गया है। भगवान ऋषभदेव को श्रीमद् भागवत गीता (5/4/14) में साक्षात् ईश्वर कहा है। ऋगवेद, विष्णुपुराण, अग्नि पुराण, भागवत आदि वैदिक साहित्य में भी उनका गुण कीर्तन आदर के साथ किया जाता है।

लोकाशाह एवं पांच धर्म सुधारक

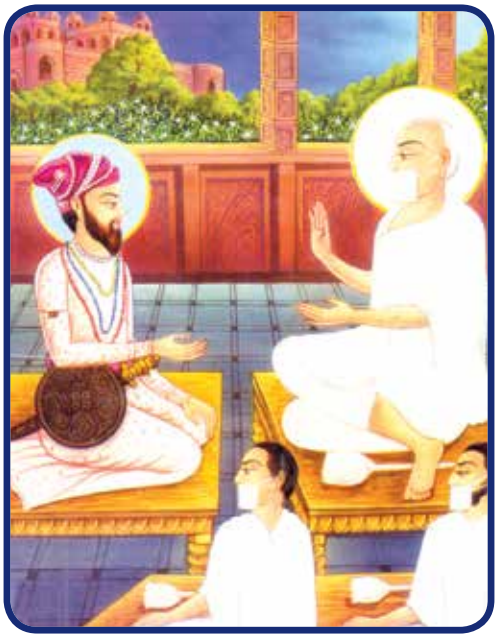

विक्रम संवत् के प्रारम्भ से 470 वर्ष पूर्व (ईसा से 527 वर्ष पूर्व) चौबीसवें तीर्थंकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का निर्वाण हुआ। वीर-निर्वाण सं. 64 तक केवली-काल रहा। आर्य जम्बू अन्तिम केवली थे। वीर सं. 64 से सं.170 तक श्रुत-केवली-काल (14 पूर्वधारी रहा)। आर्य भद्रबाहु अन्तिम श्रुत-केवली थे। वीर सं. 1000 तक सामान्य पूर्वधर-काल रहा। इसके पश्चात् पूर्वों का विच्छेद हुआ। वीर सं. 980 से 993 तक 13 वर्षों में बलभी नगरी में आचार्य देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण के नतृत्व में 84 जैन आगमों का वाचनापूर्वक लेखन हुआ।

वीर-निर्वाण 1000 से 2000 तक मुनि-परम्परा की निर्मल गंगा-धारा शिथिलाचार के पंक से दूषित हो गई। चैत्यवास (मठ में रहना) का प्रचार बढ़ने तथा विभिन्न राजाओं का आश्रय मिलने से अनगार मुनि भी मठधारी बन गए और अनेकविधि यन्त्र, तन्त्र, मन्त्र, डोरे, ताबीजों में उलझकर सोना, चांदी, छत्र, चंवर, पालकी आदि की चकाचौंध में फंस गए। वीर नि. 2001 (वि.सं. 1531) में अहमदाबाद में धर्म-प्राण लोकाशाह ने भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित जैन धर्म का प्रचार किया। उन्होंने मूर्तिपूजा, स्थापनाचार्य और पालकी आदि ग्रहण करने का विरोध करके यति-वर्ग (उस समय के भेषधारी साधु) की जड़ों पर प्रहार किया। थोड़े समय में

ही उनके 400 शिष्य तथा लाखों अनुयायी हो गए। अहमदाबाद से दिल्ली तक उनके द्वारा प्ररुपित धर्म का डंका बजने लगा।

लोकाशाह ने जो धर्म-क्रान्ति की प्रचण्ड-ज्योति प्रज्जवलित की थी, उनके निधन के 100 वर्ष बाद, उन जैसे प्रखर नेतृत्व के अभाव में, वह फिर मन्द पड़ने लगी। तब विक्रम संवत् 17वीं शताब्दी के उत्तरा में स्थान-स्थान पर पांच धर्म-सुधारक हुए। उन्होंने तत्कालीन मुनियों में आ रही शिथिलाचारी प्रवृत्तियों के विरुद्ध विद्रोह किया। स्वयं शास्त्र-विहित मुनिचर्या का पालन किया और करनी-कथनी में एकरुपता लाते हुए शास्त्रें का सच्चा ज्ञान समाज के समक्ष प्रस्तुत किया।

आज भारत-वर्ष के स्थानकवासी समाज में लगभग 4000 साधु-सतियां हैं, उन सबका मूल ये पांच महापुरुष ही हैं। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

1. **पूज्य श्री जीवराज जी म.–** इनका जन्म सं. 1638 में सूरत में हुआ। सं. 1654 में जगाजी यति के पास दीक्षा ली। आगम पढ़ने पर अन्तर्ज्ञान के नेत्र खुले। यति-जीवन से खिन्न होकर सं. 1666 में 5 साधुओं के साथ पुनः शुद्ध पंच-महाव्रत की दीक्षा ली। इन्होंने समाज में 32 आगम, डोरा-सहित मुखवस्त्रिका की दृढ़तापूर्वक स्थापना की। सं. 1698 के आसपास आगरा में इनका देवलोकगमन हुआ। आधुनिक काल में श्री फूलचन्द जी 'पुप्फभिक्खू', तपस्वी श्री रूपचन्द जी म. (जगरावां समाधि), आ. देवेन्द्र मुनि, कवि चन्दन मुनि 'पंजाबी' तथा अनुयोग-प्रवर्तक कन्हैयालाल जी म. 'कमल' आदि इनकी परम्परा में आते हैं।

2. **आचार्य धर्म सिंह जी म.–** इनका जन्म सौराष्ट्र-प्रान्त के जामनगर शहर में सं. 1687 में हुआ। शिव जी यति के पास दीक्षा ली। थोड़े ही समय में 32 आगम, तर्क, व्याकरण तथा साहित्य पढ़े। गुरु के आडम्बर-पूर्ण जीवन से विरक्त होकर सं. 1701 में क्रियोद्धार करके पुनः शुद्ध संयम ग्रहण किया। पूर्व-परीक्षा के तौर पर दिल्ली-दरवाजे के बाहर दरियाखान पीर की दरगाह में एक रात रहे। रातभर ध्यान, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग में लीन रहकर उस पीर को प्रतिबोधित किया। इसीलिए इनकी संप्रदाय 'दरियापुरी' के नाम से जानी जाती है। प्रारम्भ से आज तक इसमें केवल एक ही पाट (उत्तराधिकार) चलता रहा। सं. 1728 में इनका निधन हो गया।

3. **आचार्य श्री धर्मदास जी म.–** अहमदाबाद के पास सरखेज ग्राम में सं. 1701 में इनका जन्म हुआ। पहले 'एकल-पात्रिया' पन्थ में दीक्षा ली, पर यतियों के शिथिलाचारी जीवन से क्षुब्ध होकर सं. 1716 में पुनः शुद्ध दीक्षा ली। सं. 1721 में उज्जैन में आचार्य बने। इनका प्रभाव बड़ा व्यापक था। कच्छ, काठियावाड़, सौराष्ट्र, बांगड़, खानदेश, पंजाब, मेवाड़, मालवा, हाड़ौती, ढुंढार आदि प्रान्तों में

भ्रमण किया। आपके 99 शिष्य थे। सं. 1772 में आपने अपनी संप्रदाय को 22 टोलों में विभक्त किया। ये 22 टोले इतने प्रसिद्ध हुए कि सम्पूर्ण स्थानकावासी साधुओं के ही पर्याय बन गए, परन्तु जैसा कि इस लेख में स्पष्ट है, सम्पूर्ण स्थानकवासी साधु 22 टोलों में परिगणित नहीं है। अन्य चार महापुरुषों की शिष्य-परम्परा इन 22 टोलों से भिन्न है। 22 टोलों में 5 शिष्यों की आगे परम्परा चली। श्री मूलचन्द जी म. से गुजरात की अधिकांश सम्प्रदाएं निकली। आ. हस्तीमल जी म., तपस्वी श्री चम्पालाल जी म., उपा. कवि अमरमुनि जी म. आदि की सम्प्रदाय इसी के अन्तर्गत आती हैं।

4. **पूज्य श्री हरजी ऋषि जी म.–** इनका पूरा परिचय प्राप्त नहीं है। इनकी सम्प्रदाय बाद में कोटा-सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुई। उन दिनों इसमें 26 प्रखर पण्डित मुनिराज एवं एक पण्डिता साध्वी थी। वि.सं. 1785 में इन्होंने क्रियोद्धार किया। इनकी परम्परा में वर्तमान में खद्दर-धारी श्री गणेशीलाल जी म. एवं आचार्य-प्रवर श्री नानालाल जी म. की परम्परा आती हैं।

5. **पूज्य श्री लवजी ऋषि जी–** ये भगवान् महावीर के 76 वें पाट पर विराजे। अपने माता-पिता की एकमात्र संतान थे। बचपन में ही इनके पिता का देहान्त हो गया था, अतः अपनी मां फूलांबाई के साथ सूरत में अपने नाना वीरजी वोरा के यहां रहते थे। माता फूलांबाई की उत्कट धर्म-निष्ठा का रंग बालक लवजी पर भी चढ़ा और उन्होंने सं. 1667 में वज्रांत यति के पास दीक्षा ले ली। आगामों का गहन अध्ययन किया। संयम के प्रति रुचि जगी। सं. 1694 में यति-धर्म से पृथक् होकर शुद्ध दीक्षा ली। यतियों ने षड्यन्त्र के तहत, एक हलवाई की स्त्री द्वारा बहराए विषैले लड्डू खाने से प्राण दे दिए। इनके कुछ शिष्य गुजरात, मालवा आदि में विचरे। आ. श्री आनन्द जी म. इनकी इसी शाखा में आते हैं। आ. लवजी ऋषि के पौत्र शिष्य श्री हरिदास ऋषि जी पंजाब-प्रान्त में विचरे। उत्तर-भारत के अधिकांश साधु/सती इनकी इसी शाखा में आते हैं।

आ. श्री अमरसिंह जी म., आ. सोहनलाल जी म., आ. आत्माराम जी म., संयम-सुमेरू श्री मयाराम जी म., व्याख्यान-वाचस्पति श्री मदनलाल जी म., गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म., तपोधनी श्री बदरीप्रसाद जी म., गणाधार श्री प्रकाश मुनि जी म., संघनायक शास्त्री श्री पद्म चन्द्र जी म., संघाधार श्री विनयचंद्र जी म., बहुश्रुत श्री जयमुनि जी म., संघसंचालक श्री नरेशमुनि जी म. इस परम्परा के उल्लेखनीय महामुनिराज हैं।

पाठ्यक्रम सम्बंधित मुख्य प्रश्नोत्तर

	प्रश्न	उत्तर
1	जैन धर्म का सबसे बड़ा पर्व कौन सा है।	संवत्सरी महापर्व (भादवाशुदी पंचमी)
2	कर्म के 8 प्रकार क्या हैं?	ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय
3	कर्मों का आत्मा से पूर्णरूप से अलग हो जाना क्या है।	मोक्ष
4	हिंसा कितने प्रकार की है।	2 (अर्थ हिंसा, अनर्थ हिंसा)
5	अपने नहाने के लिए सचित जल का प्रयोग करना कौन सी हिंसा है।	अर्थ हिंसा
6	पार्क में घास पर चलना, गाय, कुत्ते आदि को डंडे मारना कौन सी हिंसा है।	अनर्थ हिंसा
7	किसी को अपशब्द बोलना, झुठी सलाह देना कौन सी हिंसा है।	अनर्थ हिंसा
8	कोई आप पर/या आपकी पत्नी पर आक्रमण करे, आप अपने आप को बचाने के लिए हिंसा करते हो, तब कौन सी हिंसा है।	अर्थ हिंसा
9	एक सैनिक देश की रक्षा के लिए दुश्मन को मारता है। यह कौन सी हिंसा है।	अर्थ हिंसा
10	एक शिकारी अपने मजे के लिए किसी जानवर को मारता है। यह कौन सी हिंसा है।	अनर्थ हिंसा
11	जैन परम्परा में काल के कितने भेद हैं।	दो
12	इस समय कौन सा काल चल रहा है।	अवसर्पिणी
13	अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर कौन थे।	भगवान ऋषभदेव
14	भ. ऋषभदेव से सम्बन्धित कौन सा त्यौहार मनाया जाता है।	अक्षय तृतीया
15	महावीर जयन्ती कब मनायी जाती है।	चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को
16	पर्यूषण पर्व कब शुरू होते हैं।	भाद्रपद कृष्णा 13 से
17	सवंत्सरी कब आती है।	भाद्रपद शुक्ला पंचमी को
18	इस अवसर्पिणी काल के अन्तिम केवली कौन थे।	आर्य जम्बू जी

पाठ्यक्रम सम्बंधित मुख्य प्रश्नोत्तर

	प्रश्न	उत्तर
19	इस अवसर्पिणी काल में अन्तिम श्रुत केवली कौन थे।	आर्य भद्रबाहु जी
20	वीरलोकाशाह ने विशुद्ध जैन धर्म का प्रचार कब किया।	वीर संः 2001 (वि. सी. 1531) में
21	पूज्य जीवराज जी म. का जन्म कब हुआ।	सं. 1638 सुरत में
22	पूज्य आचार्य धर्म सिंह जी म. का जन्म कब हुआ।	स. 1687 जामनगर में
23	आचार्य श्री धर्मदास जी म. का जन्म कब हुआ।	सं. 1701 अहमदाबाद के पास
24	पूज्य श्री लवजी ऋषि जी भ. महावीर के कौन से पाट पर बैठे।	76वें पाट पर
25	आचार्य लवजी ऋषि जी म. के पौत्र शिष्य कौन थे।	श्री हरिदास ऋषि जी
26	श्री सुदर्शन लालजी म. किस परम्परा से हैं।	आचार्य लव जी ऋषि परम्परा से
27	रात्रि चौविहार में क्या रात्रि में हम कुछ पी या खा सकते हैं।	नही
28	नवकारसी में सुबह सुर्योदय निकलने के 48 मिनट पहले क्या हम कुछ खा पी सकते हैं।	नहीं
29	एकाशना करने में दिन में कितनी बार खा सकते हैं।	1 बार
30	पौषध में क्या सामयिक के कपड़े पहनना आवयश्क है।	हां
31	पूज्य गुरूदेव श्री बदरी प्रसाद जी म. ने कितने दिन का संथारा किया।	72 दिन का
32	तप के कितने भेद हैं।	12
33	बाह्य तप के कितने भेद हैं	6
34	श्रावक के कितने व्रत हैं।	12
35	अणुव्रत कितने होते हैं।	5
36	गुणव्रत कितने होते हैं।	3
37	शिक्षाव्रत कितने होते हैं।	4
38	कर्मों की 2 प्रकार कौन सी हैं।	घाती और अघाती

पाठ्यक्रम सम्बंधित मुख्य प्रश्नोत्तर

	प्रश्न	उत्तर
39	घाती कर्म कितने हैं।	4
40	हमको किस कर्म के कारण ज्ञान नहीं होता है।	ज्ञानावरणीय
41	हमको किस कर्म के कारण धर्म पर श्रद्धा नही होती है।	दर्शनावरणीय
42	हमें नींद किस कर्म के कारण आती है।	दर्शनावरणीय
43	हमें सुख दुख किस कर्म के कारण अनुभव होता है।	वेदनीय
44	सारे कर्मों का सेनापती कौन है।	मोहनीय
45	हमारी आत्मा एक शरीर में किस कर्म के कारण टिकी रहती है।	आयुष्य कर्म
46	हमारे शरीर की बनावट किस कर्म पर निर्भर करती है।	नाम कर्म
47	अच्छे/बुरे कुल में जन्म किस कर्म की वजह से होता है।	गोत्र कर्म
48	आत्मा की मूल शक्ति को कौन रोकता है।	अंतराय कर्म
49	मनुष्यों को कौनसा शरीर होता है।	औदारिक
50	नारकी/देवताओं को कौनसा शरीर होता है।	वैक्रिय
51	क्या तेजस और कार्मण शरीर सभी अमुक्त जीवों को होता है।	हां
52	प्राण कितने प्रकार होते हैं।	10
53	लेश्या किसे कहते हैं।	जीव के भावों को
54	लेश्या कितने प्रकार की होती हैं।	6

Glossary

1	अचित्त	Non-Living
2	अचौर्य	Non-Stealing
3	अचौर्य महाव्रत	Non-Stealing Vow
4	अजीव	Non-Living Matter
5	अणुव्रत	Limited Vow
6	अधोलोक	Lower Part of Universe
7	अन्तराय	Obstructing
8	अनेकान्तवाद	Many Sidedness
9	अपकाय	Water Beings
10	अपरिग्रह	Non-Possession
11	अपरिग्रह महाव्रत	Non-Possession Vow
12	अल्पसंख्यक	Minority
13	अवधिज्ञान	Limited Knowledge
14	अहिंसा	Non-Violence
15	अहिंसा महाव्रत	Non-Violence Vow
16	आत्मा	Soul
17	आस्तिक	Theist
18	आश्रव	Influx of Karmas
19	इन्द्रियां	Senses
20	ईष्ट	Desired
21	ऊर्ध्वलोक	Upper Part of Universe
22	कषाय	Passions
23	केवल दर्शन	Complete Vision
24	केवल ज्ञान	Complete Knowledge
25	क्रोध	Anger
26	घनघाती	Destructive
27	घ्राण इन्द्रिय	Nose Sense
28	चक्षु इन्द्रिय	Eye Sense
29	चेतना	Soul
30	जिन	Conqueror
31	जीव	Living Beings, Soul
32	तत्व	Fundamentals
33	तिर्यंच	Animal Beings
34	तेऊकाय	Fire Beings
35	दर्शनावरणीय	Perception Obscuring
36	द्वेष	Hate
37	नारकी	Infernal Beings
38	नास्तिक	Atheistic
39	निर्जरा	Eradication of Karmas
40	पुण्य	Results of Good deed
41	पृथ्वीकाय	Earth Beings
42	बन्ध	Bondage of Karmas
43	ब्रह्मचर्य	Celebacy
44	ब्रह्मचर्य महाव्रत	Chaste Vow
45	मध्यलोक	Middle Part of Universe
46	मान	Pride
47	माया	Deceit
48	मुक्तजीव	Liberated Beings
49	मोहनीय	Deluding
50	मोक्ष	Liberation
51	रसना इन्द्रिय	Tounge Sense

52	राग	Attachment
53	लोभ	Greed
54	वनस्पतिकाय	Plant Beings
55	वायुकाय	Air Beings
56	वीतराग	Omnipresent
57	सचित	Living
58	सत्य	Truthness
59	सत्य महाव्रत	Truthness Vow
60	संवर	Stoppage of Karmas
61	संसारी	Worldly

62	सम्यक चारित्र	Right Character
63	सम्यक दर्शन	Right Vision
64	सम्यक ज्ञान	Right Knowledge
65	सर्वज्ञ, सर्वदर्शी	Omnipresent
66	सिद्धांत	Principle
67	स्पर्शन इन्द्रिय	Skin Sense
68	क्षय	Destroy
69	त्रसकाय	Moving Beings
70	ज्ञानावरणीय	Knowledge Obscuring
71	श्रोत्र इन्द्रिय	Ear Sense

भाग-1

जैन संस्कार शिविर समिति, दिल्ली के मुख्य उद्देश्य

1. जैन धर्मानुसार जीवन शैली अपनाकर आनन्द-युक्त जीवन (blissful life) बनाना
2. जैन धर्म के समृद्ध इतिहास, संस्कृति, दर्शन और साधना पद्धति को अत्यन्त सरल व आधुनिक तकनीक से सिखाना
3. सम्प्रदाय-निर्पेक्ष धर्म की सही जानकारी देना
4. परिवार, समाज व राष्ट्र के प्रति वफादार और जागरुक नागरिक तैयार करना
5. स्वाध्याय-शील बनने की प्रेरणा देना
6. भय मुक्त धार्मिक क्रियाओं की तरफ प्रेरित करना